वर्तमानकेसंदर्भमेंकबीरकीगुरु-भावना

Suryakanth
Research Scholar
Department of Hindi, Bangalore University, Bangalore

प्राचीनभारतसेवर्तमानकेभारततकगुरु-परम्पराचलतीआरहीहै।वेद-कालीनशिक्षापद्धतिसेलेकरआजकलकेवैज्ञानिकतकनीकीपद्धतियोंतकविचारकियाजायेतोयहस्पष्टहोताहैकिबिनागुरुकेशिष्यअपनेआपसीखनहींसकताहै।वस्तुत: शिक्षासार्वजनिकता से अधिक धर्म के आधार पर दी जाती थी। फलत: अनेक जात के मानव शिक्षा से वंचित हुए कहने में कोई संदेश नहीं है, इसके लिए इतिहास ही बहुत बड़ा प्रमाण है। मानव के विकास क्रम के साथ जाति, सम्प्रदाय, रीति-रिवाज़े, आचार-विचार, रहन-सहन आदि का विकास भी अपने आप होने लगे। परिणामतया उस समय की जाति व्यवस्था ने समाज को प्रगति रोक दिया। यह तत्कालीन जनता जानती थी। वे असहायक बने हुए थे। यह कोई काल्पनिक विचार नहीं है, इतिहास के पन्नों में स्पष्ट उल्लेख भी पाया जाता है। सदियों से शिक्षा से वंचित समुदाय परम्परानुगत चलते आना भी देखा जा सकता है। भारत परशासित होने के बाद शिक्षा देने के क्रम में परिवर्तन होना भी स्पष्ट है।

गुरु, आचार्य, अध्यापक, प्राध्यापक, विद्यादाता, मार्गदर्शक आदि सँज्ञाओं से सुशोभित गुरु के लिए महत्व था। आरम्भिक दशा में गुरु मिलना ही मुश्किल था। पढ़े-लिखे लोगों की कमी भी इसके लिए मूल कारण भी था। अध्ययन के लिए गुरुकुलों को खोला गया था। वहाँ विद्यार्जन के लिए प्रवेश लेना पड़ता था। परिपूर्ण विद्या प्राप्त करने के बाद ही पारिवारिक जीवन जाना चाहिए था। इस प्रकार अनेक कट्टर नियमों को पालन करना भी अनिवार्य था। अत: सामान्य वर्ग के कोई नहीं जा सकते थे। अतएव शिक्षा से वंचितों की संख्या अधिक दिखायी देती थी। वे अपनी वृत्ति में ही अपने और अपनी संतान लगा देते थे।

इस संदर्भ में कबीर का नाम इसी लिए उल्लेख किया जा सकता है क्योंकि उनके खास कोई गुरु नहीं थे। स्वयं वे अपढ थे, जीवनानुभव ने उसे सबकुछ सिखाया था। फिर भी गुरु के प्रति आपार श्रद्धा भाव रखा करते थे। कुछ लोगों का कहना है कि रामानंद उनके गुरु थे। गुरु के सम्बंध में अनेक

साधु-संत, सज्जन, साहित्यकार, समाज सुधारक आदि ने बहुत बडी चर्चा भी की है। अनेकों ने गुरु के कुछ लक्षण भी बताये हैं। कबीर ने तो स्वयं गुरु के महत्व के सम्बंध में कहा है-

"गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागू पाय ।

बलिहारी गुरु आपनो, जिन गोविंद दियो बताय ।।"

कबीर दास को अपने गुरु के प्रति एक परिकल्पना थी। उनका महत्व भी जानते थे। गुरु के अभाव में ज्ञानार्जन के लिए मनुष्य कैसे तडप उठते हैं, उसका अनुभव भी था। अत: आपने गुरु को भगवान से भी अधिक स्थान-मान दिया था। यह प्रंदहवी शती की बात लेकिन बीसवी सदी की बात अलग ही है। वर्तमान कालीन शिक्षा और शिक्षण पद्धति की ओर एक बार नज़र दौडायेंगे यह स्पष्ट रूप से गोचरित होगा कि आज हरेक के लिए शिक्षा प्राप्त करने सुविधा दी गयी है। परन्तु शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थी में हो या शिक्षा देनेवाले गुरु में हो क्या हम वे गुण देख सकेंगे? इस प्रकार निरुत्तर के प्रश्न हमारे सामने उठ खडे होते हैं। स्वतंत्रोत्तर भारत में सार्वजनिक रूप से सबको शिक्षित करने का प्रयत्न तो सरकार ने किया है लेकिन योग्य अध्यापक और योग्य विद्यार्थियों की कमी का महसूस किया जाता है। विद्यार्थी और गुरु शब्दों के निज अर्थ था वह विकृत होकर अलग अर्थों में प्रयोग करना भी आज देखा जा सकता है। इस प्रकार का परिवेश का निर्माण हो चुका है। इस प्रकार गुरु और शिष्य से समाज क्या अपेक्षा कर सकते हैं।

कबीर के समय के सामाजिक वातावरण और वर्तमान के परिवेश में धरती और आसमान का अंतर तो है कोई इसे नकारा जा सकता है। विद्यार्जन और विद्यादान की प्रक्रिया में भेद नहीं होना चाहिए था। यह किसी समाज के लिए हानिकारक है। कबीर के समय के गुरु और शिष्य में पितृवात्सल्य, नैतिक भय, जिज्ञास, ज्ञान पिपासु, अनुशासन का पालन आदि का गुण दिखायी देता था। वर्तमान समाज में विद्यार्थियों में उन गुणों का अभाव देखा जा सकता है। अत: विद्या एक क्रय-विक्रय सामग्री बन चुकी है। उसे प्रदान करनेवाला का महत्व भी घटता गया है।

"क्या गंगा क्या गोमती, बदरी गया पिराग।

सतगुर में सब ही आया, रहे चरण लिव लाग॥"

गुरु या अध्यापक एक सामान्य मनुष्य नहीं होता है, वह अप्रतिम प्रतिभा के प्रतिरूप माना जाता है। अपनी अध्ययनशीलता, संस्कृति, सभ्यता, निस्वार्थ सेवा मनोभाव आदि गुणों के कारण समाज में उनके लिए महत्व का स्थान दिया गया है। कबीर दास ने उसकी महत्ता का गुणगान करते हुए कहा है कि हे मूर्ख तुम बदरी, गोमति, गंगा, प्रयाग किसी भी स्थान में जाओगे तुम्हें बिना गुरु की कृपा से मोक्ष नहीं मिलेगा। सद्गुरु के चरणों में नत मस्तक होने से सारा पुण्य प्राप्त होगा और भगवान का साक्षात्कार भी कर पाते हो क्योंकि गुरु में ही ये सारे तीर्थ स्थानों पाये जानेवाले पुण्य समाहित्य है।वर्तमान समाज की जनता में क्या इस प्रकार की गुरु भावना देखी जा सकती है? क्या कमियाँ हैं आजकल के गुरुओं में? इस प्रकार के अनेक सवाल खडे होते जा रहे हैं। कबीर के समय के गुरु और वर्तमान के गुरु दोनों भगवान द्वारा निर्मित मानव ही है। गुणों में इतना अंतर क्यों दिखायी देने लगे हैं। गुरु के घटता महत्व को पुनर स्थापित करने की ओर कितना चिंतन किया जा रहा है? आज के संदर्भ में चर्चनीय विषय है।

सामाजिक प्रगति वैज्ञानिक प्रगति पर निर्भर होती जा रही है। हर विषय को वैज्ञानिक दृष्टिकोन से देखने का स्वभाव विकसित होता जा रहा है। विज्ञान की प्रगति के द्वारा अविष्कृत उपकरणों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। हथेली में सारे जगत को देखने की सुविधा भी आज प्राप्त हो चुकी है। इस स्थिति में गुरु भावना की सम्भावना नहीं है। केवल विद्यार्थियों में ही नहीं अपितु अध्यापकों में क्षमता की कमी भी दिखायी देती है। शैक्षिक व्यवस्था बदलती पथ पर अग्रसर होने से निस्वार्थ की जगह पर स्वार्थपरता राजित होती गयी। फलत: गुरु या अध्यापक के लिए जिन गुणों की आवश्यकता थी वे दिन ब दिन अदृश्य हो चुका है।

“सतगुरकीमहिमाअनंत, अनंतकियाउपकार।

लोचनअनंतउघाड़िया, अनंतदिखावणहार॥“

कबीरकीइनपंक्तियोंपरध्यानदेनेसेयहस्पष्टहोताहैकिसद्गुरुकीमहिमाकितनीथी।ज्ञान के आलोक से संपन्न सद्गुरु की महिमा असीमित है। उन्होंने मेरा जो उपकार किया है वह भी असीम है। उसने मेरे अपार शक्ति संपन्न ज्ञान-चक्षु का उद्घाटन कर दिया जिससे मैं परम तत्त्व का साक्षात्कार कर सका। ईश्वरीय आलोक को दृश्य बनाने का श्रेय महान गुरु को ही है। इस प्रकार गुरु महिमा को कबीर ने अपने अनुभव के आधार पर कहा है। वर्तमान समय में गुरु पर विचार करनेवाले हो या

उनके महत्वों पर प्रकाश डालनेवाले हो दीखता नहीं है। इससे पता चलता है कि क्रमश: गुरु का महत्व घटता जा रहा है। भविष्य के दिनों में यह भी सम्भवनीय है कि गुरु शब्द कोश में मात्र देखा सकता है न कि समाज व्यक्ति के रूप में। गुरु के बिना यह जगत शून्य है। इसे भूल बैठेंगे तो मानव जाति के लिए भविष्य नहीं है।